जीवन मृत्यु के पश्चात्

मौलाना सैयद अबुल-आला मौदूदी (रह०)
अनुवादक
नसीम ग़ाज़ी फ़लाही

'बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम'

(अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।)

जीवन, मृत्यु के पश्चात्

मरने के बाद कोई दूसरी ज़िन्दगी है या नहीं? और है तो कैसी है? यह सवाल हक़ीक़त में हमारे इल्म की पहुँच से दूर है। इसलिए कि हमारे पास वे आँखें नहीं जिनसे हम मौत की सीमा के उस पार झाँक कर देख सकें कि वहाँ क्या है और क्या नहीं है। हमारे पास वे कान नहीं, जिन से हम उधर की कोई आवाज़ सुन सकें। हम कोई ऐसी मशीन भी नहीं रखते जिसके ज़रीए से यक़ीन के साथ मालूम किया जा सके कि उधर कुछ है या नहीं। इसलिए जहाँ तक साइंस का ताल्लुक़ है, यह सवाल उसकी कार्य सीमा से बिल्कुल बाहर है। जो आदमी साइंस का नाम लेकर कहता है कि मरने के बाद कोई ज़िन्दगी नहीं है, वह बिल्कुल एक ग़ैर साइन्टिफ़िक बात कहता है। साइंस की दृष्टि से न तो यह कहा जा सकता है कि कोई ज़िन्दगी है और न यह कि कोई ज़िन्दगी नहीं है। जब तक हमें इल्म का कोई यक़ीनी और पक्का ज़रीआ हासिल नहीं होता, कम से कम उस वक़्त तक तो सही साइन्टिफ़िक बात यही हो सकती है कि हम मरने के बाद ज़िन्दगी का न इनकार करें, न इक़रार।

इक़रार और इनकार के सम्बन्ध में हमारा तरीक़ा

मगर क्या व्यावाहारिक जीवन में हम इस साइन्टिफ़िक रीति को निभा सकते हैं? शायद नहीं, बल्कि वास्तव में नहीं। अक़ली हैसियत से तो यह मुमकिन है कि जब एक चीज़ को जानने के ज़रीए और साधन हमारे पास न हों तो उसके सिलसिले में हम इनकार और इक़रार दोनों से बचें, लेकिन जब किसी चीज़ का सम्बन्ध हमारे व्यावहारिक जीवन से

हो तो हमारे लिए इसके सिवा कोई रास्ता नहीं रहता कि अपने काम के तरीक़े को या तो उसके इनकार पर क़ायम करें या इक़रार पर। मिसाल के तौर पर एक व्यक्ति है जिसको आप नहीं जानते, अगर उसके साथ आपको कोई मामला न करना हो तो आपके लिए यह मुमकिन है कि उसके ईमानदार होने या न होने के बारे में कोई फ़ैसला न करें। लेकिन जब आपको उससे मामला करना हो तो आप मजबूर हैं कि या तो उसे ईमानदार समझकर मामला करें या बेईमान समझकर। आप अपने दिल में ज़रूर यह सोच सकते हैं कि जब तक उसका ईमानदार होना या न होना साबित न हो जाए उस वक़्त तक हम शक के साथ मामला करेंगे। लेकिन उसकी ईमानदारी पर शक करते हुए जो मामला आप उससे करेंगे अमली तौर पर उसकी सूरत वही तो होगी जो उसकी ईमानदारी का इनकार की शक्ल में हो सकती थी। अतः वास्तव में इनकार और इक़रार के बीच शक की हालत सिर्फ़ दिल और दिमाग़ ही में हो सकती है। अमली तौर-तरीक़ा कभी शक पर क़ायम नहीं हो सकता, इसके लिए तो इनकार या इक़रार हर हाल में ज़रूरी है।

हमारे नैतिक व्यवहार का आधार

यह बात थोड़े-से सोच-विचार से आपकी समझ में आ सकती है कि मरने के बाद ज़िन्दगी का सवाल सिर्फ़ एक फ़लसफ़ियाना (दार्शनिक) सवाल नहीं है, बल्कि हमारी अमली ज़िन्दगी से इसका बहुत गहरा सम्बन्ध है। हमारा अख़लाक़ी और नैतिक व्यवहार क्या होगा, वास्तव में यह इसी सवाल पर निर्भर करता है। अगर मेरा यह ख़याल हो कि ज़िन्दगी जो कुछ है सिर्फ़ यही दुनिया की ज़िन्दगी है और इसके बाद कोई दूसरी ज़िन्दगी नहीं है तो मेरा अख़लाक़ी ढंग (नैतिक व्यवहार) एक तरह का होगा। और अगर मैं यह ख़याल रखता हूँ कि इसके बाद एक दूसरी ज़िन्दगी भी है, जिसमें मुझे अपनी मौजूदा ज़िन्दगी का हिसाब देना होगा और वहाँ मेरा अच्छा या बुरा अन्जाम मेरे यहाँ के

अच्छे या बुरे क़ामों के कारण होगा तो इस सूरत में यक़ीनन मेरा अख़लाक़ी रवैया (नैतिक व्यवहार) बिलकुल एक दूसरी ही तरह का होगा, जो पहले से बिलकुल भिन्न होगा।

इसकी मिसाल यूँ समझिए, जैसे एक व्यक्ति यह समझते हुए सफ़र कर रहा है कि उसे बस यहाँ से मुम्बई तक जाना है, और मुम्बई पहुँचकर न सिर्फ़ यह कि उसका सफ़र हमेशा के लिए ख़त्म हो जाएगा, बल्कि वहाँ वह पुलिस और अदालत और हर उस ताक़त की पकड़ से बाहर होगा जो उससे किसी क़िस्म की पूछ-ताछ कर सकती हो। इसके विपरीत एक दूसरा व्यक्ति यह समझता है कि यहाँ से मुम्बई तक तो उसके सफ़र की सिर्फ़ एक ही मंज़िल है। इसके बाद उसे समुद्र पार एक ऐसे देश में जाना होगा जहाँ का हाकिम वही है, जो हिन्दुस्तान का हाकिम है और उस हाकिम के दफ़्तर में मेरे उन तमाम कामों का गुप्त रिकार्ड मौजूद है जो मैंने हिन्दुस्तान में किए हैं, और वहाँ मेरे रिकार्ड को जाँचकर फ़ैसला किया जाएगा कि मैं अपने कामों के लिहाज़ से किस दर्जे के लायक़ हूँ। आप आसानी से अन्दाज़ा कर सकते हैं कि इन दोनों व्यक्तियों का व्यवहार और अमल कितना ज़्यादा एक-दूसरे से भिन्न होगा। पहला आदमी यहाँ से मुम्बई तक के सफ़र की तैयारी करेगा लेकिन दूसरे की तैयारी बाद की लम्बी मंज़िलों के लिए भी होगी। पहला आदमी यह समझेगा कि नफ़ा या नुक़सान जो कुछ भी है, मुम्बई पहुँचने तक है, आगे कुछ नहीं। और दूसरा यह ख़याल करेगा कि असल नफ़ा या नुक़सान सफ़र के पहले मरहले (चरण) में नहीं है, बल्कि आख़िरी मरहले में है। पहला आदमी अपने कर्मों के सिर्फ़ उन्हीं नतीजों पर नज़र रखेगा जो मुम्बई तक के सफ़र में निकल सकते हैं, लेकिन दूसरे आदमी की निगाह उन नतीजों पर होगी जो समुद्र पार दूसरे देश में पहुँचकर सामने आएँगे। ज़ाहिर है कि इन दोनों व्यक्तियों के रवैये का यह फ़र्क़ उनकी उस राय का प्रत्यक्ष और ज़ाहिरी नतीजा है जो वे अपने सफ़र के बारे में रखते हैं। ठीक इसी तरह हमारी अख़लाक़ी

ज़िन्दगी में भी वह अक़ीदा या धारणा फ़ैसलाकुन असर रखती है जो हम मरने के बाद की ज़िन्दगी के बारे में रखते हैं। अमल के मैदान में जो क़दम भी हम उठाएँगे उसकी दिशा का निर्धारण इस बात पर निर्भर करेगा कि क्या हम इस ज़िन्दगी को पहली और आख़िरी ज़िन्दगी समझकर काम कर रहे हैं, या किसी बाद की ज़िन्दगी और उसके नतीजों को सामने रखते हैं। पहली सूरत में हमारा क़दम एक दिशा में उठेगा और दूसरी सूरत में उसकी दिशा बिलकुल दूसरी होगी।

इससे मालूम हुआ कि मरने के बाद की ज़िन्दगी का सवाल एक अक़ली और फ़लसफ़ियाना सवाल नहीं है, बल्कि यह हमारी अमली ज़िन्दगी का सवाल है। और जब बात यह है तो हमारे लिए इस मामले में शक और संकोच की हालत में रहने का कोई मौक़ा नहीं। शक और संकोच के साथ जो नीति और रवैया हम इस ज़िन्दगी में अपनाएँगे वह लाज़िमी तौर पर इनकार ही की नीति जैसा होगा, उससे भिन्न नहीं। इसलिए हम बहरहाल इस बात का फ़ैसला करने पर मजबूर हैं कि क्या मरने के बाद कोई और ज़िन्दगी है या नहीं। अगर साइंस इसके सिलसिले में हमारी मदद नहीं करती तो हमें अक़ली और बौद्धिक दलीलों से मदद लेनी चाहिए।

अच्छा, तो अक़ली दलीलों के लिए हमारे पास क्या कुछ सामान है?

अक़ली दलीलें

जगत्-व्यवस्था

हमारे सामने एक तो ख़ुद इनसान है और दूसरी चीज़ है जगत् की यह विशाल व्यवस्था। हम इनसान को इस जगत्-व्यवस्था (निज़ामे कायनात) के अन्दर रखकर देखेंगे कि जो कुछ चीज़ें इनसान के अन्दर पाई जाती हैं, क्या उसकी सारी माँगें जगत् की इस वर्तमान व्यवस्था में पूरी हो जाती हैं या कोई चीज़ ऐसी बची रह जाती है जिसके लिए किसी दूसरी तरह की व्यवस्था की ज़रूरत हो।

देखिए, इनसान एक तो जिस्म रखता है, जो बहुत-सी धातुओं, रसायनों, पानी और गैसों से बना है। इसके मुक़ाबले में कायनात के अन्दर भी मिट्टी, पत्थर, धातुएँ, नमक, गैसें, पानी और इसी प्रकार की दूसरी चीज़ें मौजूद हैं। इन चीज़ों को काम करने के लिए जितने नियमों और क़ानूनों की ज़रूरत है, वे सब कायनात के अन्दर क्रियाशील हैं। और जिस तरह वे बाहर के वातवरण में पहाड़ों, दरियाओं और हवाओं को अपने हिस्से का काम पूरा करने का मौक़ा दे रहे हैं, उसी तरह इनसानी जिस्म को भी इन नियमों के अन्तर्गत काम करने का मौक़ा हासिल है।

इनसानी वुजूद

फिर इनसान एक ऐसा वुजूद (अस्तित्व) है जो आसपास की चीज़ों से ख़ूराक लेकर बढ़ता और परवान चढ़ता है। इसी तरह के पेड़-पौधे और घास-फूस कायनात में भी मौजूद हैं और वे नियम भी यहाँ पाए जाते हैं जो बढ़ते और परवान चढ़नेवाले जिस्मों के लिए ज़रूरी हैं।

फिर इनसान एक ज़िन्दा वुजूद है जो अपने इरादे से हरकत करता है, अपनी ख़ूराक ख़ुद अपनी कोशिशों से हासिल करता है। अपनी हिफ़ाज़त आप करता है और अपनी जाति और वंश को बाक़ी रखने का प्रबन्ध भी करता है। कायनात में इस तरह के दूसरे बहुत-से जीव भी मौजूद हैं। ज़मीन पर पानी और हवा में बेशुमार प्राणी पाए जाते हैं और वे नियम भी पूरे-पूरे तौर पर यहाँ अपना काम कर रहे हैं जो इन जानदारों के पूरे कार्यक्षेत्र पर हावी होने के लिए काफ़ी हैं।

इनसान का अख़लाक़ी वुजूद

इन सबसे ऊपर इनसान एक और क़िस्म का वुजूद भी रखता है जिसे हम अख़लाक़ी वुजूद (नैतिक अस्तित्व) कहते हैं। इनसान के अन्दर भलाई और बुराई का एहसास है, भले और बुरे की पहचान है, भलाई और बुराई करने की ताक़त है और उसकी फ़ितरत यह चाहती है कि भलाई का अच्छा और बुराई का बुरा नतीजा सामने आए। इनसान ज़ुल्म और इनसाफ़, सच्चाई और झूठ, सत्य और असत्य, रहम और बेरहमी, एहसान और एहसान-फ़रामोशी, दानशीलता और कंजूसी, अमानत और ख़ियानत और ऐसे ही विभिन्न नैतिक गुणों के बीच फ़र्क़ करता है। ये गुण अमली तौर पर उसकी ज़िन्दगी में पाए जाते हैं और ये सिर्फ़ ख़याली और काल्पनिक चीज़ें नहीं हैं, बल्कि अमली तौर पर इनके प्रभाव इनसानी सभ्यता और संस्कृति पर पड़ते हैं। इसलिए इनसान की फ़ितरत, जिसको लेकर वह पैदा हुआ है, यह चाहती है कि जिस तरह उसके कर्मों के भौतिक नतीजे सामने आते हैं, उसी तरह नैतिक परिणाम भी सामने आएँ। लेकिन जगत् की व्यवस्था पर गहरी निगाह डालकर देखिए, क्या इस व्यवस्था में इनसानी कर्मों के नैतिक परिणाम पूरी तरह प्रकट हो सकते हैं? मैं आपको यक़ीन दिलाता हूँ कि यहाँ इसकी सम्भावना नहीं है, इसलिए कि यहाँ कम से कम हमारी जानकारी की हद तक कोई दूसरी ऐसी मख़लूक़ नहीं पाई जाती जो

अख़लाकी वुजूद रखती हो। जगत् की सारी व्यवस्था भौतिक क़ानूनों के तहत चल रही है, अख़लाक़ी क़ानून किसी तरह काम करता नज़र नहीं आता। यहाँ रुपये में वज़न और क़ीमत है मगर सच्चाई में न वज़न है, न क़ीमत। यहाँ आम की गुठली से हमेशा आम पैदा होता है, मगर हक़ और सत्य का बीच बोनेवाले पर कभी फूलों की बारिश होती है और कभी, बल्कि अक्सर, जूतियों की। यहाँ भौतिक तत्त्वों के लिए निश्चित (तयशुदा) क़ानून हैं, जिनके मुताबिक़ हमेशा निश्चित नतीजे निकलते हैं, मगर नैतिक तत्त्वों के लिए कोई निश्चित क़ानून नहीं है कि उनके क्रियाशील होने से हमेशा निश्चित नतीजा निकल सके। भौतिक क़ानून के क्रियाशील होने की वजह से नैतिक परिणाम कभी निकल ही नहीं सकते। कभी निकलते हैं तो सिर्फ़ उस हद तक जिसकी इजाज़त भौतिक क़ानून दे दे। और अक्सर ऐसा भी होता है कि अख़लाक़ एक कार्य से एक ख़ास नतीजा निकलने का तक़ाज़ा करता है मगर भौतिक क़ानून की दख़ल-अन्दाज़ी से नतीजा बिलकुल उलटा निकल आता है। इनसान ने ख़ुद अपनी सांस्कृतिक और राजनीतिक व्यवस्था के ज़रीए से थोड़ी-सी कोशिश इसकी की है कि इनसानी कर्मों के अख़लाक़ी नतीजे एक तयशुदा ज़ाबते के मुताबिक़ सामने आ सकें। मगर यह कोशिश बहुत सीमित पैमाने पर है और बेहद नाक़िस है। एक तरफ़ भौतिक क़ानून उसको सीमित और नाक़िस बनाते हैं और दूसरी तरफ़ इनसान की अपनी बहुत-सी कमज़ोरियाँ इस प्रबन्ध की त्रुटियों को और अधिक बढ़ा देती हैं।

कुछ मिसालें

मैं अपनी बात को कुछ मिसालों से स्पष्ट करूँगा। देखिए, एक व्यक्ति अगर किसी दूसरे व्यक्ति का दुश्मन हो और उसके घर में आग लगा दे तो उसका घर जल जाएगा। यह उसके कर्म का भौतिक नतीजा है। उसका अख़लाक़ी नतीजा यह होना चाहिए कि उस व्यक्ति को

उतनी ही सज़ा मिले, जितना उसने एक ख़ानदान को नुक़सान पहुँचाया है। मगर इस नतीजे का ज़ाहिर होना इस बात पर निर्भर करता है कि आग लगानेवाले का सुराग़ मिले। वह पुलिस के हाथ आ सके, उस पर जुर्म साबित हो, अदालत पूरी तरह अन्दाज़ा कर सके कि आग लगने से उस ख़ानदान को और उसकी आइन्दा नस्लों को ठीक-ठीक कितना नुक़सान पहुँचा है। और फिर इनसाफ़ के साथ उस अपराधी को उतनी ही सज़ा दे। अगर इन शर्तों में से कोई शर्त भी पूरी न हो तो अख़लाक़ी नतीजा या तो बिलकुल ही ज़ाहिर न होगा, या उसका सिर्फ़ एक थोड़ा-सा हिस्सा ज़ाहिर होकर रह जाएगा। और यह भी सम्भव है कि अपने दुश्मन को बर्बाद करके वह व्यक्ति दुनिया में मज़े से फूलता-फलता रहे।

इससे बड़े पैमाने पर एक और मिसाल लीजिए। कुछ लोग अपनी क़ौम में असर पैदा कर लेते हैं और सारी क़ौम उनके कहे पर चलने लगती है। इस स्थिति से फ़ायदा उठाकर वे लोगों में जातिवाद को भड़का देते हैं और उनमें देश विजय करने की भावना पैदा कर देते हैं। फिर वे आसपास की क़ौमों और देशों से लड़ाई छेड़ देते हैं। इस तरह लाखों इनसानों को मौत के घाट उतार देते हैं। देश के देश तबाह कर डालते हैं। करोड़ों इनसानों को पस्त और ज़लील ज़िन्दगी गुज़ारने पर मजबूर कर देते हैं और मानव इतिहास पर इन कार्यवाइयों का इतना ज़बरदस्त असर पड़ता है, जिसका सिलसिला आइन्दा सैकड़ों साल तक कितनी ही पीढ़ियों और नस्लों में फैलता जाएगा। क्या आप समझते हैं कि इन कुछ लोगों ने जो अपराध किया है, उसकी उचित और न्यायपूर्ण सज़ा उनको कभी इस दुनिया में मिल सकती है। ज़ाहिर है कि अगर उनकी बोटियाँ भी नोच डाली जाएँ, अगर उनको ज़िन्दा जला डाला जाए, या कोई ऐसी सज़ा दी जाए जो इनसान के बस में है, तब भी किसी तरह वे उस नुक़सान के बराबर सज़ा नहीं पा सकते जो उन्होंने करोड़ों इनसानों को और उनकी आइन्दा बेशुमार नस्लों को पहुँचाया है।

मौजूदा जगत्-व्यवस्था जिन भौतिक क़ानूनों पर चल रही है, उनके तहत किसी तरह यह सम्भव नहीं है कि वे अपने जुर्म के बराबर सज़ा पा सकें।

इसी तरह उन भले और नेक इनसानों को लीजिए जिन्होंने मानव-जाति को हक़ और सच्चाई की तालीम दी और हिदायत की रौशनी दिखाई, जिनकी वजह से बेशुमार इनसानी नस्लें सदियों से फ़ायदा उठा रही हैं और न मालूम आइन्दा कितनी सदियों तक उठाती चली जाएँगी। क्या यह सम्भव है कि ऐसे लोगों की सेवाओं और ख़िदमतों का पूरा बदला उनको इसी दुनिया में मिल सके? क्या आप सोच सकते हैं कि मौजूदा भौतिक क़ानून की सीमाओं के अन्दर एक व्यक्ति अपने उस अमल का पूरा बदला हासिल कर सकता है, जिसका असर उसके मरने के बाद हज़ारों साल तक और बेशुमार इनसानों तक फैल गया हो?

जैसा कि मैं अभी बयान कर चुका हूँ, एक तो जगत् की मौजूदा व्यवस्था जिन नियमों पर चल रही है उनके अन्दर इतनी गुंजाइश ही नहीं है कि इनसानी कर्मों के नैतिक नतीजे पूरी तरह निकल सकें। दूसरे यहाँ कुछ साल की ज़िन्दगी में इनसान जो अमल करता है, उसके असर का सिलसिला इतना फैला हुआ होता है और इतनी मुद्दत तक जारी रहता है कि सिर्फ़ उसी के पूरे नतीजे हासिल करने के लिए हज़ारों, बल्कि लाखों साल की ज़िन्दगी चाहिए। और क़ुदरत के मौजूदा क़ानूनों के तहत इनसान को इतनी लम्बी ज़िन्दगी मिलनी नामुमकिन है। इससे मालूम हुआ कि इनसानी अस्तित्त्व के ख़ाकी (पार्थिव), उज़्वी (अवश्यम्भावी) और हैवानी (जैव) तत्त्वों के लिए तो मौजूदा भौतिक जगत् (Physical World) और उसके भौतिक क़ानून काफ़ी हैं, लेकिन उसके नैतिक तत्त्व के लिए यह दुनिया बिल्कुल नाकाफ़ी है। इसके लिए तो एक अन्य जगत्-व्यवस्था चाहिए, जिसमें शासकीय क़ानून

(Governing Law) अख़लाक़ का क़ानून हो और भौतिक क़ानून उसके मातहत केवल मददगार की हैसियत से काम करे, जिसमें ज़िन्दगी सीमित न हो, बल्कि असीमित हो। जिसमें वे तमाम अख़लाक़ी नतीजे, जो यहाँ नहीं निकल सके हैं या उलटे निकले हैं, अपनी सही सूरत में पूरी तरह सामने आ सकें। जहाँ सोने और चाँदी के बजाय नेकी और सच्चाई में वज़न और क़ीमत हो। जहाँ आग सिर्फ़ उस चीज़ को जलाए जो नैतिक दृष्टि से जलने के लायक़ हो, जहाँ ऐश और आराम उसको मिले जो नेक और भला हो और मुसीबत उसके हिस्से में आए जो बुरा और अत्याचारी हो। अक़्ल चाहती है और फ़ितरत मुतालबा करती है कि एक ऐसी जगत्-व्यवस्था ज़रूर होनी चाहिए।

अक़्ल की हद और क़ुरआन की रहनुमाई

जहाँ तक अक़ली दलील और तर्क का सम्बन्ध है, वह हमको सिर्फ़ "होना चाहिए" की हद तक ले जाकर छोड़ देता है। अब रहा यह सवाल कि क्या वास्तव में कोई ऐसी दुनिया है भी? तो हमारी अक़्ल और हमारा इल्म दोनों इसका फ़ैसला करने में असमर्थ हैं। यहाँ क़ुरआन हमारी मदद करता है। वह कहता है कि तुम्हारी अक़्ल और तुम्हारी फ़ितरत जिस चीज़ का मुतालबा करती है, हक़ीक़त में वह होकर रहेगी। मौजूदा जगत्-व्यवस्था जो कि भौतिक क़ानूनों पर बनी है, एक वक़्त में तोड़ डाली जाएगी। उसके बाद एक दूसरी व्यवस्था का निर्माण होगा, जिसमें ज़मीन और आसमान और सारी चीज़ें एक-दूसरे ढंग पर होंगी। फिर अल्लाह तमाम इनसानों को, जो शुरू दुनिया से क़ियामत तक पैदा हुए थे, दोबारा पैदा कर देगा और एक साथ उन सबको अपने सामने जमा करेगा। वहाँ एक-एक व्यक्ति का, एक-एक जाति का और पूरी इनसानियत का रिकार्ड किसी ग़लती और कमी-बेशी के बग़ैर सुरक्षित होगा। हर एक व्यक्ति के एक-एक अमल का जितना असर दुनिया में हुआ है, उसकी पूरी तफ़्सील मौजूद होगी। वे तमाम नस्लें गवाहों के

कटहरे में खड़ी होंगी, जो उस असर से प्रभावित हुईं। एक-एक कण (ज़र्रा) जिसपर इनसान की बातों और कामों के चिह्न अंकित होंगे अपनी दास्तान स्वयं सुनाएगा। ख़ुद इनसान के हाथ, पाँव, आँख, ज़बान और सारे अंग गवाही देंगे कि उनसे उसने किस तरह काम लिया। फिर इस तफ़्सील (विवरण) पर वह सबसे बड़ा हाकिम पूरे इनसाफ़ के साथ फ़ैसला करेगा कि कौन कितने इनाम के योग्य है और कौन कितनी सज़ा का। यह इनाम और यह सज़ा दोनों चीज़ें इतने बड़े पैमाने पर होंगी, जिसका कोई अन्दाज़ा मौजूदा दुनिया के सीमित पैमानों के लिहाज़ से नहीं किया जा सकता। वहाँ वक़्त और जगह के मेयार (माप-दण्ड) कुछ और होंगे। वहाँ के मान और माप कुछ और होंगे। वहाँ के क़ुदरत के क़ानून किसी और ही प्रकार के होंगे। इनसान की जिन नेकियों और भलाइयों से दुनिया हज़ारों साल तक प्रभावित रही है, वहाँ वह उन नेकियों का भरपूर बदला वुसूल कर सकेगा, बग़ैर इसके कि मौत बीमारी, बुढ़ापा और उसके ऐश और आराम का सिलसिला तोड़ सकें। और इनसान की जिन बुराइयों के असरात दुनिया में हज़ारों साल तक और बेशुमार इनसानों तक फैलते रहे हैं, वह उनकी पूरी सज़ा भुगतेगा बग़ैर इसके कि मौत और बेहोशी आकर उसे तक़लीफ़ से बचा सके।

ऐसी एक ज़िन्दगी और ऐसी एक दुनिया को जो लोग असम्भव समझते हैं, मुझे उनके ज़ेहन की तंगी पर तरस आता है। अगर हमारी मौजूद जगत्-व्यवस्था का मौजूदा प्राकृतिक नियमों के साथ मौजूद होना सम्भव है तो आख़िर एक दूसरी जगत्-व्यवस्था का दूसरे क़ानूनों के साथ वुजूद में आना क्यों असम्भव है? हाँ यह बात कि सचमुच ऐसा ज़रूर होगा तो इसका फ़ैसला न दलील से हो सकता है और न इल्मी सुबूत से, इसके लिए तो 'ईमान बिल ग़ैब' (परोक्ष पर विश्वास) की ज़रूरत है।

क़ुरआन की दलीलें

(ईश ग्रन्थ क़ुरआन मजीद में परलोकवाद के पक्ष में बेशुमार दलीलें प्रस्तुत की गई हैं, जिनमें से कुछ दलीलें यहाँ पेश की जा रही हैं।)

(1)

"(तुम हर बरसात में देखते हो कि) अल्लाह ने आसमान से पानी बरसाया और यकायक मुरदा पड़ी हुई ज़मीन में उसकी बदौलत जान डाल दी। निश्चय ही इसमें एक निशानी है सुननेवालों के लिए।"

व्याख्या : यह दृश्य हर वर्ष तुम्हारी आँखों के सामने गुज़रता है कि धरती बिल्कुल चटयल मैदान पड़ी हुई है, ज़िन्दगी की कोई निशानी मौजूद नहीं, न घास-फूस है, न बेल-बूटे हैं, न फूल-पत्ती और न किसी प्रकार के कीड़े-मकोड़े। इतने में वर्षा का मौसम आ गया और एक-दो छींटें पड़ते ही उसी धरती में से ज़िन्दगी के सोते फूटने लगे। धरती की तहों में दबी हुई अनगिनत जड़ें यकायक जी उठीं और हर एक के अन्दर से वही वनस्पति फिर बरामद हो गई जो पिछली बरसात में पैदा होने के बाद मर चुकी थीं। अनगिनत कीड़े-मकोड़े, जिनका नाम व निशान तक गर्मी के ज़माने में बाक़ी न रहा था, यकायक फिर उसी शान से प्रकट हो गए जैसे पिछली बरसात में देखे गए थे। यह सब कुछ अपनी ज़िन्दगी में तुम बार-बार देखते रहते हो और फिर भी तुम्हें नबी की ज़बान से यह सुनकर आश्चर्य होता है कि अल्लाह तमाम इनसानों को मारने के बाद दोबारा ज़िन्दा करेगा।

इस आश्चर्य का क़ारण इसके सिवा और क्या है कि तुम्हारा देखना बुद्धिहीन जीवों का-सा देखना है। तुम सृष्टि के करिश्मों को तो देखते हो मगर उनके पीछे पैदा करनेवाले की सामर्थ्य और तत्त्वदर्शिता के निशान नहीं देखते, वरना यह सम्भव न था कि नबी का बयान

सुनकर तुम्हारा दिल न पुकार उठता कि सच में ये निशानियाँ उसके बयान का समर्थन कर रही हैं।

(तफ़हीमुल-क़ुरआन भाग-2, सूरा-16, अन-नह्ल, हाशिया-53अ)

(2)

"इनकारियों ने बड़े दावे से कहा है कि वे मरने के बाद कदापि दोबारा न उठाए जाएँगे। उनसे कहो! नहीं, मेरे रब की क़सम! तुम ज़रूर उठाए जाओगे, फिर ज़रूर तुम्हें बताया जाएगा कि तुमने (दुनिया में) क्या कुछ किया है, और ऐसा करना अल्लाह के लिए बहुत आसान है।"

व्याख्या : यानी हर ज़माने में सत्य के इनकारी दूसरी जिस बुनियादी गुमराही में गिरफ़्तार रहे हैं और जो आख़िरकार उनकी तबाही का कारण बनी, वह यह थी। हालाँकि आख़िरत के किसी इनकारी के पास न पहले यह जानने का कोई साधन था न आज है, न कभी हो सकता है कि मरने के बाद कोई दूसरी ज़िन्दगी नहीं है। लेकिन इन नादानों ने हमेशा बड़े ज़ोर के साथ यही दावा किया है, हालाँकि क़तई तौर पर आख़िरत का इनकार करने के लिए न कोई अक़ली बुनियाद मौजूद है और न इल्मी।

यह वह मक़सद है जिसके लिए इनसानों को मरने के बाद दोबारा उठाया जाएगा और इसी में इस सवाल का जवाब भी है कि ऐसा करने की आख़िर ज़रूरत क्या है? इस दुनिया में जिस प्राणी को इनकार और इक़रार (कुफ़्र व ईमान) में से किसी एक राह को अपनाने कि आज़ादी दी गई हो और जिसे इस दुनिया में बहुत-सी चीज़ों के इस्तेमाल का इख़्तियार भी प्रदान किया गया हो और जिस ने कुफ़्र (इनकार) या ईमान (इक़रार) की राह अपनाकर उम्र भर अपने इस इख़्तियार को सही या ग़ल्त तरीक़े से इस्तेमाल करके बहुत-सी भलाइयाँ या बहुत-सी बुराइयाँ ख़ुद अपनी ज़िम्मेदारी पर की हों, उसके बारे में यह सोचना

बड़ी ही बेअक़्ली की बात है कि यह सब कुछ जब वह कर चुके तो आख़िरकार भले की भलाई और बुरे की बुराई दोनों बे-नतीजा रहें और सिरे से कोई वक़्त ऐसा आए ही नहीं जब इस प्राणी के कर्मों की जाँच-पड़ताल हो। जो व्यक्ति ऐसी बे-अक़्ली की बात कहता है वह आवश्यक रूप से दो बेवक़ूफ़ियों में से एक बेवक़ूफ़ी करता है। या तो वह यह समझता है कि यह संसार बना तो है हिक्मत और मक़सद के साथ मगर यहाँ इनसान जैसे बा-इख़्तियार प्राणी को ग़ैर-ज़िम्मेदार बनाकर छोड़ दिया गया है या फिर वह यह समझता है कि यह एक अललटप बना हुआ जगत् है जिसे बनाने में सिरे से किसी तत्वदर्शी की तत्वदर्शिता काम नहीं कर रही है। पहली सूरत में वह एक विरोधाभासी बात कहता है क्योंकि हिक्मत और मक़सद पर आधारित जगत् में एक बाइख़्तियार प्राणी का ग़ैर-ज़िम्मेदार होना खुले तौर पर न्याय और विवेक के ख़िलाफ़ है और दूसरी सूरत में इस बात की कोई मुनासिब वजह नहीं बता सकता कि एक अललटप बने हुए बे-मक़सद और बे-हिक्मत जगत् में इनसान जैसे बुद्धिमान प्राणी का वुजुद में आना आख़िर सम्भव कैसे हुआ और उसके दिमाग़ में न्याय और इनसाफ़ का तसव्वुर कहाँ से आ गया? बे-अक़्ली से अक़्ल की पैदाइश और बे-अद्‌ली से अद्‌ल का विचार पैदा हो जाना एक ऐसी बात है जिसका क़ायल या तो एक हठधर्म आदमी हो सकता है यह फिर वह बहुत ज़्यादा फ़लसफ़ा बघारते दिमाग़ी मरीज़ हो चुका हो।

(तफ़हीमुल-क़ुरआन, भाग-5, सूरा-64, अत-तग़ाबुन, हाशिया-14, 16)